समकालीन हिन्दी भाषा और साहित्य विविध आयाम

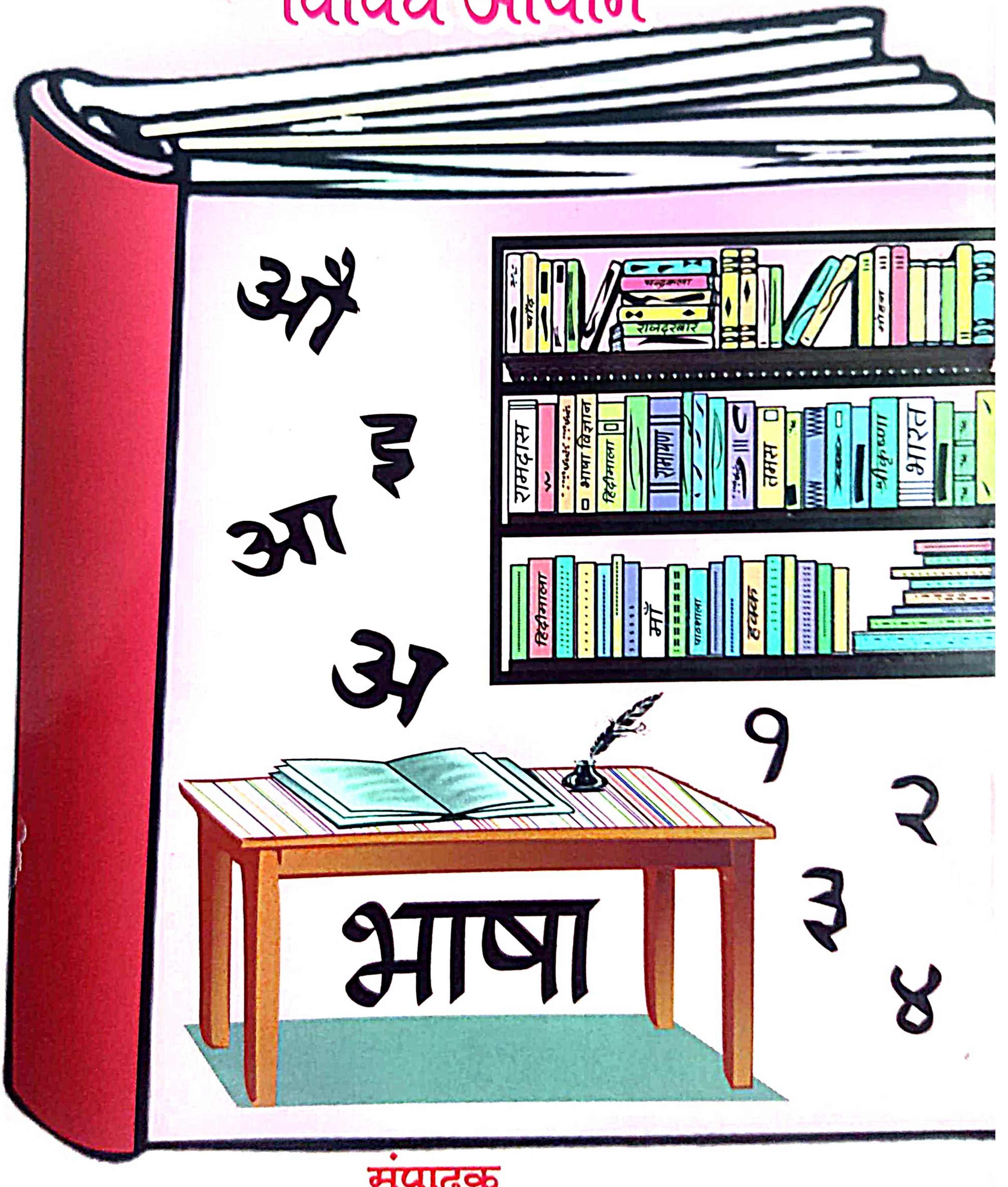

संपादक
डॉ. महानंदा पाटील

समकालीन हिन्दी भाषा और साहित्य : विविध आयाम

संपादक

डॉ. महानंदा पाटील

सह–संपादक

रामकुमार

डॉ. राजशेखर जाधव

डॉ. मीनाक्षी बी. पाटील

आर. के. पब्लिकेशन

मुम्बई

ISBN : 978-93-91458-72-0

Copyright © Reserved

प्रथम संस्करण : 2023

मूल्य : ₹ 1100/-

शीर्षक	Title
समकालीन हिन्दी भाषा और साहित्य : विविध आयाम	**Samkaleen Hindi Bhasha aur Sahitya : Vivid Aayam**
संपादक	Editor
डॉ. महानंदा पाटील	**Dr. Mahananda Patil**
प्रकाशक	Publisher
आर.के. पब्लिकेशन	**R. K. Publication**
1/12, पारस दूबे सोसायटी, ओवरी पाडा, एस.वी.रोड, दहिसर (पूर्व), मुम्बई - 400 068	1/12, Paras Dubey Society, Ovari Pada, S. V. Road, Dahisar-East, Mumbai - 400 068

Phone : 9022 521190 / 9821251190
E-mail : publicationrk@gmail.com
Website : www.rkpublication.in

अक्षर संयोजन : राजेन्द्र मिश्र
virar.mishra63@gmail.com

आवरण : सुनील निंबरे, विद्या उम्मर्जी

मुद्रक : सुमन ग्राफिक्स, मुम्बई - 400011

12. उपन्यासों में मानवीय मूल्य : एक अवधारणा
- **डॉ. महानंदा पाटील** 92

13. हिन्दी साहित्य में अल्पसंख्यक विमर्श
- **डॉ. पठान रहीम खान** 96

14. समकालीन साहित्य में सामाजिक चेतना
- **डॉ. मीनाक्षी बी. पाटील** 103

15. स्त्री-विमर्श
- **किशोरी लाल, जोशीमठ** 111

16. मानव चेतना के निर्माण में महात्मा गांधी जी के विचार (सत्याग्रह, रंगभेद और सामाजिक व्यवस्था)
- **डॉ. शशि कश्यप**
- **डॉ. तपेश चंद्र गुप्ता** 115

17. छत्तीसगढ़ के प्रमुख आदिवासी पर्यटन उद्योग : संभावनाएं (पुरखौती मुक्तांगन संग्रहालय के विशेष संदर्भ में)
- **राहुल साकरकर** 120

18. स्त्री-विमर्श 'सदियों से चल रही जंग का अंत कब - कैसे....?'
- **डॉ. महादेव जे. संकपाल** 124

19. हिन्दी कथा साहित्य में दलित विमर्श
- **वहीदा दाऊदजी** 127

20. हिन्दी और रोजगार की संभावनाएं
- **प्रो. सुनील ब. ताटे** 133

21. वैश्विक परिप्रेक्ष्य में हिन्दी का स्थान
- **प्रा. राहुल जयसिंग बहोत** 138

समकालीन साहित्य में सामाजिक चेतना

- डॉ. मीनाक्षी बी. पाटील

साहित्य और समाज में अन्योन्याश्रित संबंध होता है। साहित्य की पारदर्शिता समाज के नवनिर्माण में सहायक होती है। समाज का यथार्थवादी चित्रण, समाज के जीवंत प्रसंगों की प्रस्तुती, समाज सुधार, समाज के नवनिर्माण के लिए सामाजिक चेतना, समाज की उन्नति और विकास के लिए साहित्य आधारशिला रखता है। समाज की भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। आदिकाल से उत्तर आधुनिक काल तक जैसे अमीर खुसरो से लेकर कबीर, तुलसी, जायसी, रैदास, भारतेंदु, प्रेमचंद, निराला, नागार्जुन, यशपाल, ओमप्रकाश वाल्मीकि, मैत्रयी पुष्पा जैसे कई साहित्यकारों ने समाज के नवनिर्माण में या कहे कि समाजिक चेतना लाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। वैयक्तिक हानि उठाकर भी उन्होंने सामाजिक चेतना लाने के लिए संघर्ष किया है। समाज पूर्णतः मानव केंद्रित होने के कारण समाज का निर्माण मानव तथा उसके जीवन से जुड़ा हुआ है। इसमें मानव के मनोवेगों, मनोभावाभिव्यक्ति, अनुभूति, मानव का जीवन संघर्ष आदि समाविष्ट हैं और साहित्य में इन्हीं सब का समावेश होता है। इसलिए विद्वानों ने 'साहित्य समाज का दर्पण है' कहा है। साहित्य के आलोक से समाज में चेतना का संचरण होता है। कह सकते हैं कि सहित्य मानव के पारस्परिक सामाजिक संबंधों को और भी सुदृढ़ बनाता है। डॉ.गुलाब राय ने साहित्य और समाज के संबंध में अभिमत दिया है कि, "साहित्य मनुष्य-जाति के सामाजिक संबंधों को और भी दृढ़ बनाता है क्योंकि उसमें मनुष्य जाति का सम्मिलित हित रहता है, सम्मिलित हित और आनंददायिनी शक्ति के कारण ही साहित्य संरक्षणीय बनता है।"[1] क्योंकि उसमें संपूर्ण मानव जाति का हित निहित होता है। सामाजिक उन्नयन में साहित्य का महत्त्वपूर्ण सर्वोपरि और सर्वप्रमुख योगदान रहा है।

साहित्य चाहे कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, आत्मकथा या साहित्य की कोई अन्य विधा क्यों न हो, वो तभी सार्थक कहलाती है जब उसमें सामाजिक यथार्थ या चेतना का बोध हो। लावेंथल के अनुसार,

"साहित्यिक कृतियों में सामाजिक चेतना दो रूपों में व्यक्त होती है। कुछ रचनाओं में अनेक प्रकार की चेतनाओं का द्वंद्व होता है। ऐसी रचनाओं में सामाजिक यथार्थ की विविधता के साथ चेतनाओं की अनेकता जुड़ी होती है। सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति का दूसरा रूप वह है जहाँ एक ही चेतना पूरी रचना की संरचना में व्याप्त होती है।"[2] सामाजिक विद्रूपता, असमानता, पक्षपात, शोषण, दमन, अस्पृश्यता का विद्रोह आदि ऐसे कुछ बिन्दु हैं, जिनके बिना सार्थक साहित्य का सृजन असंभव है। साहित्यकार इन्हीं को रेखांकित करता है और सामाजिक चेतना के लिए गति मिलती है। लेखक अपने समय के समाज को अभिव्यक्त करने के साथ-साथ अपने समय की समस्याओं, सवालों, विसंगतियों, परिस्थितियों और चिंताओं को साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त करने का सफल प्रयास करता है। मनुष्य में सामाजिक चेतना उत्पन्न कर स्वस्थ समाज का निर्माण करने में साहित्यकार तथा साहित्य का महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। अपने आस-पास के परिवेश को, जीवन शैली को, मानव के मनोभावों को साहित्य के द्वारा समझाने का प्रयास करता है।

साहित्यकार अपने युग का प्रतिनिधि होता है। वह सामाजिक गतिविधियों का सूक्ष्म आकलन कर अपने सामाजिक अनुभवों को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। बात करते हैं समकालीन साहित्य की तो अस्सी के आस-पास के समय को समकालीन साहित्य का प्रस्थान बिन्दु माना जाता है। समकालीन साहित्य व्यापक जन-समुदाय, वर्गों, विस्तृत फलक में सम्मिलित होता है। समकालीन साहित्य में साहित्यकारों ने साहित्य के द्वारा जटिल यथार्थ, मानवीय संवेदना, करुणा, दया, कुंठा, अहिंसा, मानवाधिकार के तत्त्व, लोकतांत्रिक जीवन मूल्य, समाज में व्याप्त रूढ़ी, अंधविश्वास, अज्ञानता, मानवीय समानता, प्रेम, शांति, भाईचारा, सहानुभूति, सहयोग, संघर्ष, वैज्ञानिकता, अशिक्षा, पीड़ित-दमित-उपेक्षित समाज का चित्रण आदि पर विचार-विमर्श करते हैं, प्रतिरोध करते हैं। समाजिक चेतना लाने का सफल प्रयास करते हैं। इसके साथ ही आधुनिकता के कारण पल-पल परिवर्तित परिवेश, बदलते जीवन मूल्य, भूमंडलीकरण के कारण लुप्त हो रही भारतीय संस्कृति और सभ्यता, पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण

करती युवा पीढ़ी आदि का समावेश भी समकालीन साहित्य में हुआ है। फलस्वरूप आज साहित्य में कई विमर्शों तथा वादों ने स्थान ग्रहण किया है। जैसे- स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, पर्यावरण विमर्श, किसान विमर्श, किन्नर विमर्श, विकलांग विमर्श, युवा विमर्श, मजदूर विमर्श आदि। इन साहित्यिक रूपों का प्रमुख उद्देश्य समाज में सामाजिक चेतना का निर्माण तथा सामाजिक विकास है। इस संदर्भ में डॉ. मैनेजर पाण्डेय लिखते हैं कि, "साहित्य रूपों के विकास की प्रक्रिया सामाजिक विकास से प्रभावित होती है।"[3] साहित्य समाज से प्रभावित ही नहीं होता है उसे प्रभावित भी करता है। समकालीन साहित्य में सामाजिक चेतना अधिक दिखाई देती है।

उदय प्रकाश की कविता 'औरतें' में स्त्री शोषण, पीड़ा, वेदना का मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है। समाज में एक स्त्री की जो व्यथा है, दुःख है उसका चित्रण करते हुए लिखते हैं-

"एक औरत नाक से बहता खून पोंछती हुई बोलती है
कसम खाती हूँ, मेरे अतीत में कहीं नहीं था प्यार
वहाँ था एक पवित्र, शताब्दियों लंबा, आग जैसा धधकता सन्नाटा
जिसमें सिंक रही थी सिर्फ आपकी खातिर मेरी देह।"[4]

स्त्री शोषण का प्रतिरोध करते हुए समाज में स्त्रियों पर लगातार हो रहे जुल्मों के प्रति आवाज उठाते हैं। स्त्री सदियों से पुरुष प्रधान समाज में प्रेम और स्नेह के लिए तरसती रही है। सदियों से वह पुरुषों के लिए केवल भोग्या बनकर ही जी रही है। इस संदर्भ में सिमोन द बोउवार के विचारों का उल्लेख करना महत्त्वपूर्ण लगता है। वे लिखती हैं, "वह अनिवार्यतः पुरुष के लिए भोग की एक वस्तु है और इसके अलावा कुछ भी नहीं। वह पुरुष के संदर्भ में ही परिभाषित और विभेदित की जाती है। वह आनुषंगिक है, अनिवार्य के बदले नैमित्तिक है, गौण है। पुरुष आत्मा है, विषयी है। वह पूर्ण है, जबकि औरत बस 'अन्या' है।"[5] वह लगातार पुरुषों से हो रहे अत्याचारों को सहती आ रही है। इसी कविता में भ्रूण हत्या के द्वारा कैसे एक स्त्री इस धरती पर जन्म लेने से पूर्व ही शोषण का शिकार होती है इसकी ओर संकेत कर भ्रूण हत्या का विरोध करते हुए लिखती हैं कि-

"हजारों-लाखों छुपती हैं गर्भ के अँधेरे में
इस दुनिया में जन्म लेने से इंकार करती हुई
वहाँ भी खोज लेती हैं उन्हें भेदिया ध्वनि तरंगें
वहाँ भी, भ्रूण में उरती है हत्यारी कटार।"[6]

पुरुष प्रधान समाज में स्त्री केवल परंपरा या रीति-रिवाज जैसे दकियानुसी विचारों से प्रताड़ित नहीं है बल्कि विज्ञान से भी प्रताड़ित है। समाज में आधुनिकता का प्रवेश होते ही उसके साथ वैज्ञानिकता का भी प्रवेश होता है। वैज्ञानिकता के कारण स्त्री की स्थिति इतनी शोषणीय हो चुकी है कि सदियों पहले स्त्री जन्म लेने के बाद शोषण का शिकार बनती थी। उसके ऊपर जुल्म होते थे। परंतु वैज्ञानिकता ने स्त्री को जन्म लेने से पूर्व ही शोषण का शिकार बना दिया है। भ्रूण परीक्षण के द्वारा स्त्री भ्रूण हत्या का शिकार होती जा रही है। कवि स्त्री शोषण तथा स्त्री भ्रूण हत्या के प्रति आक्रोश व्यक्त करता है।

प्रतिभा कटियार की कविता 'ओ अच्छी लड़कियों' कविता में रीति-रिवाज, परंपरा की आड़ में लड़कियों पर लगाई जानेवाले बंधिशों, प्रतिबंधों का खुलकर प्रतिरोध किया गया है। लड़कियों से आग्रह करती है कि रस्मों रिवाजों को, सारे बंधनों को तोड़कर खुलकर अपनी इच्छानुसार जी लो। वे लिखती हैं-

"ओ अच्छी लड़कियों
तुम थक नहीं गई क्या अच्छे होने की सलीब ढोते-ढोते
सुनो, उतार दो अपने सर से अच्छे होने का बोझ
लहराओ न आसमान तक अपना आँचल
हँसो इतनी तेज कि धरती का कोना-कोना
उस हँसी में भीग जाए
उतार दो रस्मों, रिवाज के जेवर
और मुक्त होकर देखो संस्कारों की भारी भरकम ओढ़नी से
अपनी ख्वाहिशों को गले से लगाकर रो लो जी भर के
आँखों में समेट लो सारे ख्वाब जो डर से
देखे नहीं तुमने अब तक"[7]

सामाजिक रीती-रिवाज के नाम पर प्रतिबंध में बंधी स्त्री परंपरा के नाम पर सदियों से शोषण का शिकार बनती आ रही है। रीति-रिवाज ही उसके लिए जंजीर हैं। प्रतिभा कटियार ऐसे जंजीरों से मुक्त होकर अपनी इच्छा से स्वतंत्र जीवन जीने की प्रेरणा दे रही है।

समकालीन दलित काव्य परंपरा के अंतर्गत कई कवियों ने अपनी रचना से युगीन वास्तविकता का आकलन किया है। दलित कविता जाति विशेष से ऊपर उठकर अपने सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति करती हुई दिखाई देती है। सदियों से हो रहे अन्याय, दमन, अत्याचार, तथा शोषण का पूरे आक्रोश के साथ प्रतिरोध करते हैं। डॉ. जयप्रकाश कर्दम की कविता 'गौतम एक बार फिर आओ' में दलित उत्पीड़न-शोषण का चित्रण करते हुए समाज में बढ़ रहे जाति व्यवस्था या जाति के नाम पर मानव कुल में व्याप्त भेदभाव का विरोध करते हुए लिखते हैं-

"गौतम एक बार फिर आओ
धम्म, ध्यान, निर्वाण ज्ञान का
अमृत देते जाओ
मानवता की चीत्कार को
नैतिकता के मूल्य-ह्रास को
पतनोन्मुख संस्कृति, सभ्यता
वैमनस्यता के विचार को
जन-मन से दूर भगाओ।"[8]

दलित समाज सदियों से पीड़ित-शोषित है। इस पीड़ित समाज की व्यथा को दलित साहित्य में संजीदगी के साथ अभिव्यक्त की गई है। दलित साहित्य हिन्दू सभ्यता एवं संस्कृति के आड़ में अंधश्रद्धा या अंधानुकरण के नाम पर दलितों को जो यातना और वेदना मिली उससे मुक्त होने का स्वर है। जन मानस में सामाजिक चेतना लाने के लिए भारतीय जन-मानस में जिस जाति-व्यवस्था का, वैमनस्य का बीज बोए गए हैं उसे जड़ से उखाड़ने के लिए कहते हैं। संपूर्ण जन मानस को मानव-मानव के प्रति संवेदनशील बनने के लिए प्रेरित करते हैं। वर्ण-व्यवस्था से मुक्त होने पर बल देते हैं।

समकालीन साहित्य वस्तुत : नये सिरे से विचार-विमर्श करने के

लिए हमें बाध्य करता है। यहाँ किसी एक समाज या समुदाय की बात न कर संपूर्ण भारतीय समाज या समुदाय की चर्चा करते हैं। यहाँ समूहिक सामाजिक चेतना है। ऐसे में समाज का ही एक अंग होते हुए समाज से कटे किन्नर समाज को कैसे अलग कर सकते हैं? सामाजिक संरचना में मुख्य रूप से दो लिंग- स्त्री और पुरुष को देखते हैं। इसके अतिरिक्त तीसरा लिंग भी है, जो न स्त्री है न पुरुष। अर्थात् लिंगहीन। जिसे हम परिष्कृत शब्दावली में किन्नर कहते हैं। अधिकांश किन्नर जो अपने ही माता-पिता से परित्यक्त संतान है, जो मातृ-पितृ वात्सल्य से दूर सामाजिक व आर्थिक रूप से असुरक्षित और निःसहाय, शिक्षा से वंचित तथा उपेक्षित होते हैं। समाज से प्रताड़ित होते हैं।

गीतिका 'वेदिका' द्वारा विरचित कविता 'अधुरी देह' में कवयित्री ने इतनी मर्म स्पर्शीयता के साथ एक किन्नर की व्यथा का अंकन किया है कि-

"अधूरी देह क्यों मुझको बनाया
बता ईश्वर! तुझे ये क्या सुहाया?

किसी का प्यार हूँ, न कि वास्ता हूँ
न तो मंजिल हूँ, न मैं रास्ता हूँ
अनुभव पूर्णता का हो न पाया,
अजब यह खेल, रह-रह धूप छाया,
अधूरी देह...

नहीं नारी हूँ मैं, और नर नहीं हूँ
विवश हूँ मूक हूँ, पत्थर नहीं हूँ
उचित पथ क्यों नहीं मुझको दिखाया?
सभी ने रक्त के आँसू रुलाया
अधूरी देह...

बहिष्कृत और तिरस्कृत त्रासदी हूँ
भरी जो पीर से, जीवन नदी हूँ
मिलन सागर को ही कब रास आया?

वही एकाकीपन मुझमें समाया
अधूरी देह...।''[9]

कविता की प्रत्येक पंक्तियों के प्रत्येक शब्दों में कितनी वेदना भरी है, दर्द छिपा है। कविता के प्रत्येक शब्द किन्नरों के जीवन भर की वेदना, व्यथा, त्रासदी, विवशता, एकाकीपन, अपूर्णता का दुःख, परायेपन का एहसास सब कुछ एक साथ बयान करते हैं।

समकालीन कविता के केन्द्र में कोई एक मुख्यधारा या विषय न होने के कारण विज्ञान या वैज्ञानिकता ने भी कविता के केन्द्र में स्थान ग्रहण कर लिया है। आज विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे निरंतर नित नवीन आविष्कारों के कारण विश्व भी ग्राम बन गया है। हेमंत द्विवेदी की कविता 'हाई प्रोफाईल' में वैज्ञानिक प्रगति के बारे में लिखते हैं-

''विश्व एक गाँव बन गया।
विश्वास न हो तो मेरे गाँव में
आकर खुद देख लें
कि महज एक एयरटेल के टावर ने
इण्टरनेट आन कर दिया!''[10]

संचार माध्यमों में हुई क्रांति इस सदी की एक महत्त्वपूर्ण घटना है। संचार क्रांति के कारण मानव-मानव के बीच विचारात्मक, भावनात्मक तथा सूचनात्मक स्तर के अंतर संबंधों में गहरा और निकटतम संबंध स्थापित हुआ है। कवि ने यहाँ संचार माध्यमों में हुई क्रांति के साथ कृषि क्षेत्र में आयी आधुनिकता पर भी ध्यान आकृष्ट किया है। पहले भारतीय किसान पारंपरिक रूप से खेती करते थे। लेकिन आधुनिकता के कारण भारतीय किसान भी नये कृषि साधनों तथा यंत्रों की सहायता से कृषि करने लगे हैं। इनकी ही कविता 'अंधेरी सरहदे' में लिखते हैं-

''हल, बैल, खुर्पी, फावड़ा, कुलहाड़ी से
हाथ में देखते गट्टों को
सहलानेवाला गाँव
ट्रैक्टर पर बैठते ही
अंग्रेजी बोलने लगा।''

पारंपरिक खेती करने के लिए जिन साधनों का उपयोग किया जाता था उन सब का स्थान एक मात्र ट्रैक्टर ने ले लिया है। आधुनिक दौर में जिन मशिनों के आविष्कार हुए उससे भारतीय कृषि पद्धति के साथ भारतीय सभ्यता पर भी गहरा प्रभाव पड़ा है।

अंततः कह सकते हैं कि समकालीन कविता व्यापक फलक में विस्तृत है। इसमें आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल, छायावाद, प्रयोगवाद, प्रगतिवाद की तरह किसी एक ही विषय को केन्द्र में रखकर एक ही पहलुओं पर कविताओं की रचना न होकर समाज के प्रत्येक वर्ग, समस्या, आवश्यकता, परिवर्तन, उत्पीड़न, प्रतिरोध, विकास, सामाजीक-राजनीतिक चेतना, सभ्यता-संस्कृति आदि हर छोटे-मोटे विषयों पर ध्यान आकृष्ट कर कविताओं की रचना की गई है। कविताओं के माध्यम से समाजिक चेतना को लाने का प्रयास किया गया है।

संदर्भ सूची :-

1. हिन्दी निबंध सौरभ, श्यामचन्द कपूर, पृष्ठ- 41
2. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका, डॉ. मैनेजर पाण्डेय, पृष्ठ- 136
3. वही, पृष्ठ- 138
4. https://www.hindwi.org/kavita/aurten-uday-prakash-kavita
5. स्त्री : उपेक्षिता, सीमोन द बोउवार, पृष्ठ- 23
6. https://www.hindwi.org/kavita/aurten-uday-prakash-kavita
7. काव्य कलश (कविता संकलन) सं- डॉ. राजेंद्र पोवार, पृष्ठ- 60
8. वही, पृष्ठ- 57
9. अधूरी देह, गीतिका 'वेदिका', पृष्ठ- 13
10. अग्निगर्भ, हेमंत द्विवेदी, पृष्ठ- 45
11. वही, पृष्ठ- 63

सहायक प्राध्यापक (हिन्दी विभाग)

एस. बी. कला एवं

के. सी. पी. विज्ञान महाविद्यालय, विजयपुर

❖❃❖